भारतीय सामंतवाद : उत्पत्ति, विकास और सामाजिक.आर्थिक प्रभाव

रोबिन

शोधार्थी, बौद्ध अध्ययन विभाग दिल्ली विश्वविद्यालय

प्रस्तावना

प्राचीन भारत के इतिहास में सामंतवाद एक महत्वपूर्ण राजनीतिक, आर्थिक और संस्कृतिक व्यवस्था के रूप में उत्पन्न हुआ, जिसने प्राचीन काल में विद्यमान व्यवस्था को विभिन्न प्रकार से प्रभावित किया। सामंतवादी व्यवस्था ने गुर्जर-प्रतिहार,पाल, राष्ट्रकूट,परमार, चंदेल आदि वंश के संस्थापक राजा प्रदान किये, सामंतवाद से अभिप्राय उस व्यवस्था से है जिसमें भूमि का स्वामित्व, राजनितिक और आर्थिक शक्ति समाज के कुछ विशिष्ट वर्गों के हाथों में केंद्रित होती है और कृषक वर्ग उनके अधीन कार्य करता है। भारत में सामंतवाद का विकास यूरोपीय सामंतवाद से अलग प्रकार से हुआ माना जाता है । जहाँ यूरोप में इसकी जड़े बड़े बड़े जमींदारों से जुडी थी वही भारत में भूमि-अनुदान प्रणाली, विकेंद्रीकरण तथा कृषि-आधारित अर्थव्यवस्था में निहित थीं। इस व्यवस्था ने न केवल दरबारी प्रणाली को बल्कि ग्रामीण अर्थव्यवस्था , कृषक और व्यापारी वर्ग को भी प्रभावित किया । भारत में सामंतवाद का उद्भव गुप्त सम्राज्य के पत्तन के बाद का माना जाता है ,सामंतवादी व्यवस्था ने भारतीय समाज को आत्म निर्भर ग्रामीण व्यवस्था और सबसे मत्वपूर्ण विकेंद्रीयकरण राजनितिक व्यवस्था दी जो बाद में जा कर समाज का मुख्य आधार बन गयी लेकिन ज़ब परिस्थितिया बदलने लगी तब सामंतवाद के कारण उत्पन्न केंद्रीयकरण ही इसके लिए एक तरह से पत्तन का कारण बन गया

भारतीय सामंतवाद की अवधारणा

सामंतवाद शब्द का प्रयोग उन राजनीतिक और आर्थिक संबंधों के लिए किया जाता है जिनमें भूमि के बदले सेवा और निष्ठा प्रदान की जाती है। भारत में सामंतवाद की अवधारणा को प्रमुख रूप से इतिहासकार आर.एस. शर्मा ने विकसित किया।

उनके अनुसार गुप्तोत्तर काल में भूमि-अनुदानों की वृद्धि, व्यापार का पतन और ग्रामीण अर्थव्यवस्था की आत्मनिर्भरता ने सामंती संबंधों को जन्म दिया।

भारतीय सामंतवाद का स्वरूप यूरोप से भिन्न था। यूरोप में सामंतवाद सैन्य सेवा और जागीरदारी पर आधारित था, जबकि भारत में भूमि-अनुदान और प्रशासनिक अधिकारों के

हस्तांतरण ने सामंती संरचना को विकसित किया। राजा अपने अधिकारियों, ब्राह्मणों तथा सैन्य अधिकारियों को भूमि प्रदान करता था, जिसके बदले वे शासन और प्रशासन में सहयोग देते थे।

भारतीय सामंतवाद की उत्पत्ति

भारत के विषय में सामंतवाद का अध्ययन करने वाला प्रथम व्यक्ति जेम्स टॉड था तथा चाणक्य ने प्रथम बार अपनी रचना अर्थशास्त्र में इसका वर्णन किया है!

भारतीय सामंतवाद की उत्पत्ति के संबंध में विभिन्न मत प्रस्तुत किए गए हैं। अधिकांश इतिहासकार इसकी शुरुआत गुप्त काल तथा गुप्तोत्तर काल से मानते हैं। इस काल में राजाओं द्वारा ब्राह्मणों, मंदिरों और अधिकारियों को भूमि-अनुदान देने की

परंपरा का विस्तार हुआ।

भूमि-अनुदान देने के साथ में केवल भूमि ही नहीं दी जाती थी, बल्कि उस भूमि पर रहने वाले किसानों से कर वसूलने और प्रशासनिक अधिकार भी प्रदान किए जाते थे। प्रारम्भिक काल में ज़ब सामंतवाद कि शुरुआत हुई तब इस व्यवस्था को अपना कर राजा बंजर भूमि को उपजाऊ भूमि में परिवर्तित करने के लिए एक तरह से अपने मंत्रियो ब्राह्मणो तथा प्रशासनिक अधिकारियो को प्रोत्साहन किया करता था जिससे राजा तथा आम जनता दोनों को लाभ हुआ करता था लेकिन कुछ समय बाद सामंती व्यवस्था में त्रुटिया बढ़ती गयी और एक समय आया कि स्थानीय स्तर पर शक्तिशाली भू-स्वामी वर्ग का उदय हुआ। समय के साथ ये भू-स्वामी स्वतंत्र शक्ति केंद्रों में परिवर्तित हो गए और सामंती व्यवस्था की नींव मजबूत हुई।

राजनीतिक अस्थिरता और विशाल साम्राज्यों के विघटन ने भी सामंतवाद के विकास में योगदान दिया। जब केंद्रीय सत्ता कमजोर हुई, तब स्थानीय शासकों और सामंतों का महत्व बढ़ गया।

सामंतवाद का विकास

गुप्त साम्राज्य के पतन के बाद भारत में अनेक क्षेत्रीय राज्यों का उदय हुआ। इन राज्यों की प्रशासनिक व्यवस्था सामंतों पर निर्भर थी। हर्षवर्धन के काल से लेकर राजपूत काल तक सामंतों की शक्ति में निरंतर वृद्धि हुई।

राजाओं द्वारा सामंतों को भूमि और अधिकार प्रदान किए जाते थे। बदले में सामंत राजा को सैन्य सहायता, कर और राजनीतिक समर्थन प्रदान करते थे। इस प्रकार एक पदानुक्रमिक संरचना विकसित हुई जिसमें राजा शीर्ष पर और किसान सबसे नीचे स्थित थे।

राजपूत काल में सामंतवाद अपनी परिपक्व अवस्था में पहुँच गया। विभिन्न राजपूत राज्यों में सामंत स्थानीय प्रशासन, न्याय व्यवस्था और कर-संग्रह का कार्य करते थे। वे अपने क्षेत्रों में लगभग स्वतंत्र शासकों की तरह कार्य करते थे। 1956 में डी. डी. कोशाम्बी में अपनी रचना 'एन इंट्रोडक्शन टू द स्टडी ऑफ इंडियन हिस्ट्री' में भारत के इतिहास में सामंतवाद के विकास के दो स्वरूप का वर्णन किया

1. उर्ध्वगामी सामंतवाद अर्थात ऊपर से नीचे कि तरफ सामंतवाद का विकास राजा द्वारा अपने अधिकारियो को दिया गया भूमि दान
2. अधोगामी सामंतवाद:- नीचे से ऊपर कि तरफ को सामंतवाद का विकासअर्थात ज़ब क्षेत्रिय स्तर पर जमींदार वर्ग का उभरना,

हर्षचरित्र में बताया गया है के राजा हर्षवर्धन के समय में अधिकारियो को वेतन नगद ना देकर भूमिदान के रूप में दिया जाता था बाणभट्ट ने कादम्बरी और हर्षचरित्र में सामंतो द्वारा किये जाने वाले कार्यों का वर्णन किया है वह बताते है कि सामंतो का का मुख्य कार्य राज्य के लिए सेना को संगठित करना, कर को एकत्रित करना, हर साल राज दरबार में अपनी वफादारी को दिखाना, सामंत अपनी जमीन में स्वं खेती नहीं करते थे बल्कि यह छोटे किसानो से खेती को कराया करते और उनका आर्थिक शोषण किया करते जिस समाज में कृषक वर्ग कि हालत बहुत खराब होती जाती जो गाँव सामंतो को भूमिदान में दिए जाते वहा के प्रत्येक वर्ग से कर एकत्रित करने के साथ साथ सामंत उनसे बेगार भी कराया करते थे

भारतीय सामंतवाद की प्रमुख विशेषताएँ

1. भूमि-अनुदान प्रणाली:- भूमि सामंती व्यवस्था का आधार थी। राजा अपने समर्थकों और अधिकारियों को भूमि दान में दिए करता था। भूमि से प्राप्त आय सामंतों की आर्थिक शक्ति का प्रमुख स्त्रोत थी।
2. राजनीतिक विकेंद्रीकरण:- सामंतवादी व्यवस्था के कारण केंद्रीय सत्ता कमजोर हुई और स्थानीय शासकों की शक्ति बढ़ी। प्रशासनिक अधिकारों का स्थानीय स्तर पर हस्तांतरण हुआ।
3. कृषक वर्ग का शोषण किसानों पर विभिन्न प्रकार के कर लगाए जाते थे। उन्हें सामंतों की सेवा करनी पड़ती थी तथा उनकी आर्थिक स्थिति कमजोर होती गई। किसानो को कृषक दास बनाया जाता तथा उनसे जबरदस्त जस्ती खेती कराई जाती, और जब सामंत को जरूरत होती तब किसानो से बेगार भी कराई

जाती थी उनसे उनकी उपज का एक तिहायी तक क़ृषि कर के रूपये में ले लिया जाता जिससे बचने के लिए वह अक्सर राज्य से पलायन कर लिए करते

4. आत्मनिर्भर ग्रामीण अर्थव्यवस्था लम्बी दुरी के व्यापर नष्ठ या कम होने के कारण गांव में अतिरिक्त उत्पादन घाट गया और अब गांव में उत्पादन उतना ही किया जाता जितना जरूरत होती,गाँव उत्पादन और उपभोग की स्वतंत्र इकाइयों के रूप में विकसित हुए। अधिकांश आवश्यकताओं की पूर्ति स्थानीय स्तर पर ही होने लगी।
5. सामाजिक पदानुक्रम सामंती व्यवस्था में सामाजिक असमानता बढ़ी। समाज विभिन्न वर्गों में विभाजित हो गया, जिनमें सामंत और कृषक प्रमुख थे।इसके अतिरिक्त समाज में जो निम्न तबका था उसमे गरीबी कि बेतहासा वर्दी हुई, अब समाज शोषक और शोषित में विभाजित हो गया

सामाजिक प्रभाव

भारतीय सामंतवाद का समाज पर व्यापक प्रभाव पड़ा। सामंत वर्ग समाज का प्रभावशाली वर्ग बन गया। उनकी आर्थिक और राजनीतिक शक्ति ने सामाजिक प्रतिष्ठा को भी बढ़ाया।

जाति व्यवस्था को भी सामंतवाद से बल मिला। ब्राह्मणों और क्षत्रियो को भूमि-अनुदान मिलने के कारण उनकी स्थिति और मजबूत हुई। दूसरी ओर किसान और श्रमिक वर्ग अपेक्षाकृत कमजोर स्थिति में रहा।

महिलाओं की स्थिति पर भी प्रतिकूल प्रभाव पड़ा। सामंती समाज में पितृसत्तात्मक मूल्यों को बढ़ावा मिला तथा महिलाओं की स्वतंत्रता सीमित होती गई। बाल विवाह, पर्दा प्रथा और सती जैसी प्रथाओं को सामाजिक स्वीकृति मिलने लगी।

आर्थिक प्रभाव

सामंतवाद ने भारतीय अर्थव्यवस्था को गहराई से प्रभावित किया। भूमि उत्पादन का मुख्य साधन बन गई और कृषि अर्थव्यवस्था का आधार बन गई।

व्यापार और वाणिज्य में गिरावट देखी गई। अनेक इतिहासकारों के अनुसार गुप्तोत्तर काल में लंबी दूरी के व्यापार का महत्व कम हुआ। परिणामस्वरूप ग्रामीण अर्थव्यवस्था अधिक आत्मनिर्भर बन गई।

किसानों पर करों का बोझ बढ़ गया। उत्पादन का बड़ा हिस्सा सामंतों और शासकों के पास चला जाता था। इससे कृषक वर्ग की आर्थिक स्थिति कमजोर होती गई।

हालाँकि कुछ क्षेत्रों में सामंतों ने सिंचाई, कृषि विस्तार और स्थानीय विकास को भी प्रोत्साहित किया, जिससे कृषि उत्पादन में वृद्धि हुई।

राजनीतिक प्रभाव

सामंतवाद के कारण केंद्रीय सत्ता का क्षरण हुआ और क्षेत्रीय शक्तियों का उदय हुआ। स्थानीय सामंतों की शक्ति इतनी बढ़ गई कि वे कई बार केंद्रीय सत्ता को चुनौती देने लगे।

राजपूत काल में राजनीतिक विखंडन का एक प्रमुख कारण सामंती व्यवस्था थी। विभिन्न सामंत अपने-अपने क्षेत्रों में स्वतंत्रता की भावना रखते थे, जिससे राष्ट्रीय एकता प्रभावित हुई। इसके बावजूद सामंतों ने प्रशासनिक व्यवस्था को बनाए रखने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। सीमावर्ती क्षेत्रों की सुरक्षा तथा स्थानीय प्रशासन का संचालन उनके माध्यम से ही संभव हो पाया।

भारतीय सामंतवाद पर इतिहासकारों के विचार

आर.एस. शर्मा ने भारतीय सामंतवाद को प्रारंभिक मध्यकालीन भारत की प्रमुख विशेषता माना है। उन्होंने भूमि-अनुदान प्रणाली और व्यापार के पतन को इसके प्रमुख कारणों के रूप में प्रस्तुत किया।

हरबंस मुखिया ने भारतीय सामंतवाद की अवधारणा पर प्रश्न उठाते हुए कहा कि भारतीय परिस्थितियाँ यूरोपीय सामंतवाद से भिन्न थीं, इसलिए दोनों की तुलना सावधानीपूर्वक की जानी चाहिए।

बी.एन.एस. यादव तथा डी.डी. कोसंबी जैसे इतिहासकारों ने भी भारतीय समाज और अर्थव्यवस्था में सामंती संबंधों की उपस्थिति को स्वीकार किया है, किंतु उनके स्वरूप और सीमा पर मतभेद व्यक्त किए हैं।

सामंतवाद का पतन

दिल्ली सल्तनत और बाद में मुगल साम्राज्य के उदय के साथ सामंती व्यवस्था में परिवर्तन आने लगा। जब भारत में तुर्क आये तब वह अपने साथ एक नई व्यवस्था लाये जिसे 'इक्तादारी प्रथा' कहा जाता था जिसने सामंतवाद कि जगहा ली,

मुगलों की मनसबदारी व्यवस्था ने पारंपरिक सामंतवाद को नई दिशा दी। यद्यपि भूमि और शक्ति का संबंध बना रहा, परंतु केंद्रीय सत्ता का नियंत्रण अधिक मजबूत हो गया।

औपनिवेशिक काल में ब्रिटिश शासन द्वारा नई भूमि-राजस्व व्यवस्थाओं के लागू होने से पारंपरिक सामंती संरचना में व्यापक परिवर्तन आया।

उपसंहार

भारतीय सामंतवाद भारतीय इतिहास की एक महत्वपूर्ण संस्था थी जिसने प्रारंभिक मध्यकालीन भारत के राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक जीवन को गहराई से प्रभावित

किया। इसकी उत्पत्ति भूमि-अनुदान प्रणाली, राजनीतिक विकेंद्रीकरण और कृषि-आधारित अर्थव्यवस्था में निहित थी। सामंतवाद ने जहाँ एक ओर स्थानीय प्रशासन और कृषि विस्तार को प्रोत्साहित किया, वहीं दूसरी ओर सामाजिक असमानता, कृषक शोषण और राजनीतिक विखंडन को भी बढ़ावा दिया।

भारतीय सामंतवाद का अध्ययन हमें मध्यकालीन भारत की संरचना, सत्ता-संबंधों और सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया को समझने में सहायता प्रदान करता है। यह केवल एक राजनीतिक व्यवस्था नहीं थी, बल्कि एक व्यापक सामाजिक-आर्थिक प्रणाली थी जिसने भारतीय इतिहास की दिशा को लंबे समय तक प्रभावित किया।

सन्दर्भ ग्रंथ सूची:-

1. *शर्मा, आर एस. -इंडियन फूडीलिज्मा।नई दिल्ली: 2011।*
2. *शर्मा, आर. एस. - द इंडियन फूडीलिज्म, नई दिल्ली, 1965*
3. *कोसांबी, डी. डी.- एन इंट्रोडक्शन टू द इंडियन हिस्ट्री। नई दिल्ली: , 2008।*
4. *जायसवाल, सुबीरा:-जाति व्यवस्था का उद्भव और विकास। नई दिल्ली:2004।*
5. *पाण्डेय, विमलचन्द्र:-प्राचीन भारत का राजनीतिक तथा सांस्कृतिक इतिहास। इलाहाबाद: 2015।*
6. *ठाकुर, उपेन्द्र:- भारतीय इतिहास की रूपरेखा। पटना: बिहार हिन्दी ग्रंथ अकादमी, 2010।*
7. *चन्द्र, सतीश:- मध्यकालीन भारत। नई दिल्ली: 2018।*
8. *शर्मा, एल. पी:- प्राचीन भारत का इतिहास। आगरा: 2016।*

***